

[श्री शिव नारायण]

ही हालत रही तो विद्यार्थी अंग हमको रिप्लेस नहीं कर सकेगा।

संयोग से मैं भी एक छोटा मोटा अध्यापक रहा हूँ। मैं प्राइमरी का, हायर सिकेंडरी का, हाई स्कूल का अध्यापक रहा हूँ। मैं कह सकता हूँ कि अगर बाप और बेटे का सम्बन्ध अच्छा रहेगा, बेटा बाप की बात को मानना रहेगा तो कोई भी उस्ताद बच्चों को अपनी हकूमत पर रख सकता है। लेकिन इसके साथ-साथ हमारे प्रोफेसर साहब मुझे माफ करे अगर मैं यह कहूँ कि आज बड़े बड़े प्रोफेसर लोग जो हैं वे केवल किताबें लिखने में लगे रहते हैं, उसी के पीछे दीवाने रहते हैं और लड़कों की तरफ उतना ध्यान नहीं देते जितना देना चाहिये। घर में बैठ कर भी वे किताबें लिखते रहते हैं। यूनियन से ही यूनिटी होगी और उससे हमारे देश का डिवेलपमेंट होगा। यह ठीक बात है।

देश को हमें बिगाड़ना नहीं है, बनाना है। यह हमारी जिम्मेदारी है। मैं शिक्षा मन्त्री जी से कहना चाहता हूँ कि वह अध्यापकों की तरफ भी ध्यान दें। मुदामा और कृष्ण का आदर्श लाने की आज आवश्यकता है। कृष्ण बहुत बड़े थे लेकिन मुदामा छोटे थे। लेकिन जब दोनों मिले तो भ्रातृत्व की भावना से। उनका आपस में प्रेम रहा। लेकिन आज वह बात नहीं है। आज इस आदर्श की स्थापना हमको देश में करनी है।

हमारे बच्चों को जो वजीफा मिलना होता है उसको ये लोग खा जाते हैं। मैनैजमेंट में बड़ी गन्दगी है। मैंने चागला साहब मे प्रार्थना की थी कि हिन्दुस्तान की शिक्षा को आप नैशनलाइज करो। मीनोपोलित्र को आप खत्म नहीं कर सकते हैं तो कम से कम शिक्षा को तो आप नैशनलाइज करो इसको तो आप अपने कन्ट्रोल में रखो। अगर आपने ऐसा किया तभी अच्छे नागरिक बन सकेगे। आज शिक्षा जगत में बड़ी

कमियाँ हैं। फिर मौका जब मिलेगा तब मैं उन कमियों की ओर शिक्षा मन्त्री का ध्यान दिनाऊंगा। हमारे वर्तमान शिक्षा मन्त्री गुरु रहे हैं, प्रोफेसर रहे हैं, डाक्टर हैं, विद्वान हैं, पंडित हैं। उनको जब यह पद मिला तो उमका देश ने स्वागत किया। हमने उनको वैलकम किया

MR. CHAIRMAN : The hon. Member will continue his speech on the next non-official day.

We will now take up the Half- an-hour discussion.

18.29 hrs.

HALF AN HOUR DISCUSSION Students Unrest in India

श्री श्रीचन्द्र गोयल (चण्डीगढ़) : समापति महोदय, आज देश के सामने जो एक अति गम्भीर समस्या है उसकी तरफ मैं मन्त्री महोदय का ध्यान दिलाना चाहता हूँ। चूंकि मन्त्री महोदय सहानुभूतिपूर्वक इस समस्या पर विचार करते हैं इसलिए मैं समझता हूँ कि आज इस वाद-विवाद के द्वारा जो भी रचनात्मक सुभाव उनके मामने उपस्थित किये जायेंगे उन पर वह सहानुभूतिपूर्वक विचार करेंगे और उन को धमल में लाने का प्रयत्न करेंगे।

आज विद्यार्थियों में अशांति है, क्षोभ है, अमन्तोष है और वह क्षोभ इस प्रकार का रूप धारण करता जा रहा है जिससे सभी देशवासियों को चिंतित होना स्वाभाविक है। अनेकों स्थानों पर इसका भीषण स्वरूप प्रकट हुआ है, अनेकों स्थानों पर इसने हिंसात्मक रूप धारण किया है, अनेकों स्थानों पर विश्वविद्यालयों की सम्पति जलाई गई है। अन्य सरकारी सम्पत्ति जलाई गई है, रेलवे विभाग की सम्पत्ति जलाई गई है या उसको नष्ट अष्ट किया गया है। मैं

समझता हूँ कि ऐसा जब होता है तो सारे देश को एक भारी हानि उसके फलस्वरूप होती है। यह देख कर भी मुझे थोड़ा सा कष्ट होता है कि दूसरे देशों में जब विद्यार्थी भ्रान्दोलन चलता है तो उसके पीछे कोई बड़े भ्रादश रहते हैं, प्रार्थिक समस्याओं को हल करना पड़ता है, राजनीतिक समस्याओं को हल करना उद्देय्य रहता है।

परन्तु हमारे यहां विद्यार्थियों के जो भ्रान्दोलन चलते हैं, आम तौर पर उनके पीछे छोटे छोटे प्रश्न होते हैं। कहीं पर उनका शिक्षा शुल्क बढ़ाये जाने पर, कहीं पर परीक्षा न देने की इच्छा न होने से यह मांग करने पर कि परीक्षा नहीं होनी चाहिए, कहीं पर काफी देर तक अध्यापकों की नियुक्ति न होने के कारण और कहीं निवास और अन्य कठिनाइयों को ले कर ये आन्दोलन जन्म लेकर भीषण रूप धारण कर लेते हैं। इस सम्बन्ध में सरकार का यह तरीका रहा है कि विद्यार्थियों की वास्तविक समस्याओं और कठिनाइयों पर शुरू से ही सहा-नुभूतिपूर्वक विचार कर के उन्हें हल करने के बजाय उन्हें लम्बा किया जाता है और उन्हें नौकरशाही मनोवृत्ति से हल करने का प्रयत्न किया जाता है। इस लिए वे समस्याएं और कठिनाइयां ज्यादा भीषण और गम्भीर होती चली जाती हैं।

इस लिए मैं मन्त्री महोदय से यह निवेदन करूंगा कि जहां कहीं विद्यार्थियों द्वारा छोटे रूप में कोई भ्रान्दोलन प्रारम्भ होता है, तो शुरू में ही उसको समाप्त करवाने के लिए इस बात की जांच की जाये कि विद्यार्थियों की मांगों के पीछे, उनके असन्तोष के पीछे कितना प्रौचित्य है, कितनी जेनविनर्नस है और इस बात का भ्रन्दाजा लगा कर बातचीत के माध्यम से उस समस्या को हल करने का प्रयत्न किया जाये। भ्राज होता यह है कि विद्यार्थियों की समस्याओं के भीषण रूप धारण कर लेने के बाद जब सरकार घुटने टेकती है और कोई हल ढूँढने का प्रयत्न

करती है, तो समाज में और विद्यार्थी जगत में भ्रान्दोलन करने की मनोवृत्ति बल पकड़ जाती है।

इसमें मन्देह नहीं कि भ्राज सारे देश में भ्रनुशासनहीनता बढ़ती जा रही है और उसका प्रभाव विद्यार्थी जगत पर भी हो रहा है। लेकिन भ्राम भ्रनुशासनहीनता तो एक बड़ी समस्या है। उनका हल तुरन्त निकालने में तो शायद शिक्षा मन्त्री सफल नहीं होंगे, लेकिन जिन जिन बातों का वह इलाज कर सकते हैं, उनकी तरफ मैं उनका ध्यान दिलाना चाहता हूँ।

भ्राज एक बड़ी समस्या यह है कि अध्यापक और विद्यार्थी का सम्बन्ध वह नहीं रहा, जो भ्राज से कुछ साल पहले था। पहले अध्यापकों के प्रति विद्यार्थियों में श्रद्धा की भावना रहती थी, जो कि भ्राज लोप होती जा रही है। इसका एक कारण यह है कि अध्यापकों के चयन की दोषपूर्ण पद्धति और उन्हें कम वेतन देने के कारण हम इस विभाग में अच्छे लोगों को नहीं ला पाते हैं। प्रोफेसर साहब और ऐसे कुछ दूसरे लोगों के भ्रप्राद को छोड़ दीजिए, लेकिन प्रायः विद्यार्थियों में यह इच्छा रहती है कि वे इंजीनियर या डाक्टर बनें या पब्लिक सर्विस कमिशन के किमी कांम्पटीशन में बैठ कर प्रशासनिक नौकरियां में जायें। उनके बाद समाज में जो बचा खुचा तत्व रहता है, उमी को हम यूनिवर्सिटीज और स्कूल-कालेजों में ला पाते हैं। अगर हम अध्यापकों को उच्च वेतन दे कर समाज के सब से उत्तम तत्व और भ्रश को विश्वविद्यालयों में और शिक्षा के क्षेत्र में भ्राकावित करें, तो मैं समझता हूँ कि उनका भी एक अच्छा परिणाम होगा।

पहले अध्यापकों और विद्यार्थियों का जो सम्बन्ध होता था, उस के कारण अध्यापकों का सकेत मात्र ही समस्याओं को हल करने के लिए काफी होता था। उस समय के अध्यापक विद्यार्थियों की चरेसू कठिनाइयों में

[श्री चन्द गोयल]

दिलचस्पी लेते थे और उन्हें दूर करने का प्रयत्न करते थे। मैं दिल्ली में मिशन कालेज का विद्यार्थी था, जहाँ हमारे मिशनरी प्रोफेसर्स थे। वे हमारी धरलू दिक्कतों और समस्याओं की तरफ़ काफ़ी ध्यान देते थे। उदाहरण के लिए अगर हम कोई ड्रामा देखना चाहते थे और हमारे पास पैसे नहीं थे, तो वे हमारी सहायता कर देते थे। इस कारण विद्यार्थियों की उन के प्रति श्रद्धा रहती थी। इस की तुलना में आज का अध्यापक अपने आप को एक वेतन पाने वाले कर्मचारी के रूप में देखता है।

विद्यार्थियों के प्रति देश के प्रति उस की क्या जिम्मेदारी है, मैं समझता हूँ कि डम में आज बड़ी भारी कमी पड़ी है। प्रोफेसर साहब चूँकि इसी क्षेत्र के अनुभवी और एक प्रकांड पंडित हैं इसलिए मैं उन से यह निवेदन करूँगा कि वह इस पर मोचे कि आज इस समाज को किस प्रकार से सुधारा जा सकता है? आज विद्यार्थियों को केवल हम नसीहत दे कर, शिक्षा दे कर ठीक मार्ग पर लाना चाहें तो यह असंभव है। जैसे स्वामी विवेकानंद ने कहा था :

An ounce of example is better than a ton of advice.

आज स्थिति यह हो गई है कि हमारे अध्यापक विद्यार्थियों के सामने स्वयं एक आदर्श बनने के बजाय केवल शिक्षा देकर, केवल ऐडवाइस दे कर उन के दिल की तसल्ली करना चाहते हैं। लेकिन मैं निवेदन करना चाहता हूँ कि अध्यापक जब तक स्वयं आदर्श बन कर विद्यार्थियों के सम्मुख नहीं आएँगे तब तक जिस प्रकार की श्रद्धा उन के बारे में पहले होती थी, वह श्रद्धा हम कायम नहीं कर पाएँगे और जब तक यह श्रद्धा का रिश्ता अध्यापक और विद्यार्थी में कायम नहीं रहेगा, तब तक यह समस्या गंभीर होती चली जाएगी। इस दिशा में भी आज कुछ सोचने की आवश्यकता है। इस के

साथ साथ पहले शिक्षा के अन्दर उस का कोई न कोई नैतिक आधार होता था, उस का कोई न कोई धार्मिक आधार होता था और आज भी मुझे पता है, अनेकों इस प्रकार के मंत्री हैं जिन के जीवन के अंदर धर्म ने, नैतिकता ने इतना गहरा स्थान लिया हुआ है कि अनेकों कांग्रेस बेंच पर बैठे हुए मंत्री वगैर भजन किए, पूजा किए, बगैर कोई साधना किए, मोजन तक करना या कोई चीज लेना पसंद नहीं करते। आखीर इन सारी चीजों का परिणाम होता है। मैं यह नहीं कहता कि बिलकुल धार्मिक शिक्षा ही दी जाय। लेकिन धार्मिक शिक्षा से ही कोई चिड़ है तो कम से कम जो नैतिक शिक्षा है, जो रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद और योगिराज भरद्वाज जैसे लोगों ने देश के लिए नैतिक आधार कायम किए हैं मैं समझता हूँ कि एक नीत के तीर पर विद्यार्थी जगत के अंदर उन चीजों का प्रसर जब तक नहीं करेंगे, वह आधार शिक्षा को जब तक नहीं देंगे तब तक मैं समझता हूँ कि केवल पैसे कमाने वाली यह जो शिक्षा है, उस से वह चीज प्राप्त नहीं कर सकते जो करना चाहते हैं।

दूसरी ओर एक बड़ी समस्या है वह यह है कि आज जो विद्यार्थियों के पास अवकाश है, आज जो अध्यापकों के पास अवकाश है उस का सदुपयोग कैसे किया जाय? तीन घंटे की शिक्षा देने का जो सिद्धांत अध्यापकों के लिए निश्चय किया था उस के पीछे यह भावना थी कि वह तीन घंटे पढ़ाएँगे, लेकिन उस तीन घंटे पढ़ाने के लिए, उस तीन घंटे में विद्यार्थियों को क्या देना है, इस को प्राप्त करने के लिए दस घंटे वह लाइब्रेरी में या और जगह गंभीर अध्ययन करेंगे जब तक दस घंटे वह इस प्रकार गंभीर अध्ययन नहीं करेंगे तब तक विद्यार्थियों को तीन घंटे में क्या देना है, यह वह दे नहीं सकेंगे। इसलिए जो अवकाश रखा गया था विद्यालय के अध्यापकों के लिए या कालेज के अध्यापकों

के लिए उस के पीछे यह मानना थी कि वह पूरी खोज कर के और उस का एक निचोड़ जो है वह विद्यार्थियों के सामने रखने का प्रयत्न करेंगे। लेकिन आज अनेक अध्यापक जो रेडीमेड पुस्तकें तैयार हो गई हैं उन्हीं का सहारा ले कर पढ़ाना चाहते हैं। तो मैं समझता हूँ कि इस तरह से वह विद्यार्थियों के अन्दर उस प्रकार की स्फूर्ति नहीं पैदा कर सकते जो वह अध्यापक कर सकते हैं जिन का स्वयं अपना एक आदर्श रहता है और जिन का अपना गंभीर अध्ययन रहता है। इस के साथ साथ मैं यह कहना चाहूँगा कि आज जो विद्यार्थियों के अन्दर यह बढ़ता हुआ असंतोष और क्षोभ है इस को हल करने का एक और तरीका मैं ने कई शिक्षा संस्थाओं में देखा है। वह टीचर पेरेंट्स एसोसिएशन है जिस में अध्यापक और विद्यार्थियों के माता पिता एक साथ बैठ कर उन की समस्याओं पर विचार करते हैं ताकि उन के माता-पिताओं को पना लग जाय कि उन के बच्चों की क्या प्रगति है और बच्चों के साथ उन का कुछ न कुछ संपर्क और अनुशासन रहे, इस से भी हम में काफी महायना मिलती है। मैं समझता हूँ कि अगर इस प्रकार के संगठनों को हम और प्रोत्साहन देंगे तो वह भी इस समस्या को हल करने में हमारे काफी सहायक सिद्ध होंगे।

अंतिम बात मैं यह कहना चाहता हूँ कि जो आज विद्यार्थियों के सामने अवकाश है उस अवकाश को सही दिशा देने की दृष्टि से हमारी सरकार ने कोई पग आज तक नहीं उठाया है। विद्यार्थियों के पास भी काफी अवकाश रहता है। हमारे समय में उस अवकाश का उपयोग खेलों में किया जाता था, गेम्स में, स्पोर्ट्स में, यू०टी०सी० में और हमारे कालेज में धनकों प्रकार के संगठन और क्लब्स सोसाइटीज थीं या शैक्षणिक संस्थाएँ थीं जिस में विद्यार्थियों को जोता जाता था। विद्यार्थियों का समय उन संस्थाओं के जरिए समाज की

सेवा में लगाया जाता था। आज मैं समझता हूँ कि हमारे देश के अन्दर जहाँ बेपढ़े लिखे लोगों का बाहुल्य है वहाँ विद्यार्थियों की सेवा भी अत्यन्त आवश्यकता है। अगर हम इन के अवकाश को, खाली समय को ऐसी दिशा देने का प्रयत्न करेंगे तथा उस के लिए कोई संस्था बना कर सरकार की तरफ से इस दिशा में आवश्यक पग उठाए जायेंगे तो मैं समझता हूँ हम अवकाश को एक दिशा मिलेगी।

प्राज्ञ जिस तरह से कहा जाता है कि 'गम्पटी माडण्ड इज ए डेविल्ज वर्कशाप' अगर उन के पास कुछ करने को न हो तो अनेक प्रकार के विपरीत विचार उनके दिमागों में घाने स्वाभाविक हैं। इस लिए मैं समझता हूँ कि यह एक प्रावश्यक चीज है, जिसकी तरफ हमारी सरकार ध्यान देगी।

मैं चाहता हूँ कि सरकार समस्या की तरफ पुनर्विचार करने के लिए एक समिति का निर्माण करे, जिसमें देश के कुछ उच्च शिक्षा शास्त्री, हमारी संसद के कुछ सदस्य, हमारी संसद में भी शिक्षा देने वाले इस प्रकार के विद्वान हैं, तथा कुछ अन्य लोगों का चयन किया जाय और वह समिति इस मारी समस्या पर विचार कर के कुछ प्रावश्यक पग उठाये ताकि यह जो बीमारी है, जो बीषण समस्या है, उसका प्रागे विस्तार न होने पाये।

श्री बेणी शंकर शर्मा (बांका) : समापित महोदय, हमारे माननीय मित्र श्री गोयल जी ने जो प्रस्ताव रखा है, उसका समर्थन करते हुए मैं केवल दो शब्द कहना चाहता हूँ। इस प्राघे घण्टे की चर्चा में इतना समय नहीं है कि हम छात्रों में आज जो असन्तोष और भ्रशान्ति व्याप्त है, उसका निदान कर सकें। इसके लिए एक हाई पावर्ड कमीशन की आवश्यकता है, जो इसके कारणों में जाकर उनके निराकरण के उपाय मोचे, परन्तु मैं मन्त्री महोदय का ध्यान एक अन्य विषय की ओर आकर्षित करना चाहूँगा

[श्री बेणीशकर शर्मा]

जब से हमारी छात्र संस्थाओं में—स्कूलों और कालिजों में—ट्रेड यूनियन्ज के आघार पर यूनियनों का संगठन हुआ है, तब से हम देख रहे हैं कि हमारे विद्यार्थियों में घोर असन्तुष्टि और असन्तोष है। इसी यूनियनों में जो राइवलरी चल रही है, प्रतिद्विधा का जोर है, कहीं एक पार्टी के विद्यार्थी का साम्राज्य है तो कहीं दूसरी पार्टी के विद्यार्थियों का, जगह जगह बेराव हो रहे हैं, अध्यापकों का अपमान किया जा रहा है, उनको लांछित किया जा रहा है। अमीर कलकत्ते की एक घटना की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ, वहाँ वाइस-चांसलर को कई घंटों तक रोक कर रखा गया

MR. CHAIRMAN : I request hon. Members to put questions. I cannot allow every Member to make a short speech; then there will not be time for the Minister to reply. The House will not sit beyond 7 o'clock.

श्री बेणीशकर शर्मा : इस पृष्ठभूमि में यदि आप देखें तो आप पावेंगे कि इन यूनियनों में कुछ ऐसे लड़के होते हैं जो परमानेंटली पोलिटिक्स का काम करते हैं और जहाँ तक मेरा अनुमान है वे लड़के दो-दो, चार-चार वर्ष से फेल होते रहते हैं— इस लिये मैं माननीय मन्त्री जी से पूछना चाहता हूँ कि क्या वे शिक्षण संस्थाओं से स्कूलों, कालिजों और विश्वविद्यालयों से ऐसे लड़कों के बारे में जो यूनियन्ज के लीडर हैं, जान-पड़ताल करायेंगे कि क्यों ये लड़के जो दो-दो, चार-चार वर्ष से फेल होते हैं, वहाँ पर असन्तोष और असन्तुष्टि फैलाने के लिए वे क्यों और कैसे काम करते हैं, उन के इतिहास को देखते हुए उनको वहाँ से हटाने की कोई स्कीम बनायेंगे, जिससे बाकी लड़कों पर, जो पढ़ाना चाहते हैं, उनका प्रभाव न पड़े और वे शान्ति से पढ़ सकें।

SHRI A. SREEDHARAN (Badagara) : Students are the most sensitive of our

society. When there is frustration in society, naturally it is most acutely felt among the student population. I do not want to go into more details because the time is limited. If you look at the educational system today, you will find that a sedulous attempt is being made to create a new class of educated people. Children of high-paid officers or children who come from wealthy families in urban and rural areas go to special schools and grow up in a special atmosphere and prize jobs go to them. Such schools are the foundation of a new type of caste system which is developing in this country.

Another thing is, the children of rich parents can get admission anywhere. I know of a medical college in Mysore State where the capitation fee is as high as Rs. 25,000 per admission. It is just like selling some merchandise in the black market. This is happening all over the country. There are private, professional medical colleges where huge amounts are to be paid for obtaining admission.

The third point is this. Students, particularly those who come from poor families, find their future very bleak and gloomy when they come out of the universities and go for jobs and when they write competitive examinations and also before the service Selection Boards. These Service Selection Boards and bodies that select graduates for top-class jobs are full of corruption and nepotism. So I would like to ask the hon. Minister—I know DR. Rao has a soft corner for the poor men's son and daughter— what steps the Government propose to take when we are on the eve of the fourth Plan, when it is just on the anvil? In the fourth Plan, what concrete steps do the Government propose to take, firstly, to abolish the special types of schools? If it is the States' responsibility, how are they going to elicit the co-operation of the states. What steps are they going to take to abolish the capitation fee, black market and trading in education? That is the second question. Thirdly, what drastic measures is he going to adopt to eradicate corruption and nepotism in selection and other matters connected with education?

श्री भोम प्रकाश त्यागी (मुरादाबाद) : सभा-पति महोदय, मैं शिक्षा मन्त्री से जानना चाहता हूँ कि क्या यह सत्य है कि सरकार की दृष्टि में राष्ट्र निर्माण को केवल कल-कारखानों का निर्माण ही समझा जा रहा है और देश के नव-युवक अर्थात् मानव-निर्माण की शिक्षा के क्षेत्र में उपेक्षा की गई है ? क्या यह तथ्य है कि देश के बच्चों के निर्माण पर जिस अनुपात में धन खर्च करना चाहिए था उस अनुपात में आपके विभाग को पैसा नहीं मिलता है ?

दूसरी बात यह है कि क्या आप यह अनुभव करते हैं कि नगरों में जो साम्प्रदायिकता, जातिवाद और भाषावाद का वातावरण व्याप्त है, उमके रहते हुए राष्ट्र का अखण्ड निर्माण सम्भव है ? अर्थात् क्या स्कूलों में आप बच्चों का सही निर्माण कर सकते हैं जिनमें वे केवल 6-7 घंटे ही रड़ते हैं और बाकी 18 घंटे उस दूषित वातावरण में और सिनेमा इत्यादि में रहते हैं ? आज इस जातिवाद, प्रान्तवाद, भाषावाद आदि गंदे वातावरण को देखते हुए क्या आप देश का सही निर्माण करने के लिए इस देश के बच्चों को फ्री शिक्षा देने के लिए रेजिडेंशल टाइप के स्कूलों का निर्माण करेंगे जहाँ पर कि सभी बच्चों के लिए एक से विचार, एक सा खाना और एक ही जगह रहने के लिए व्यवस्था हो ? और वहाँ पर खाने-पीने, शिक्षा आदि का सारा प्रबन्ध आप अपनी ओर से करेंगे, ताकि दस सालों में इस राष्ट्र का सही निर्माण किया जा सके जिसमें जातिवाद, प्रान्तवाद और भाषावाद का कोई दोष न हो ? इस सम्बन्ध में यदि आप शिक्षा टैंक्स भी लगायेंगे तो हर माता-पिता उसको देने के लिए तैयार रहेगा । तो क्या आप गुरुकुल शिक्षा प्रणाली का प्रबन्ध करने की कृपा करेंगे ?

तीसरी बात यह है कि क्या वर्तमान समय में बच्चों में घृणाति का यह कारण तो नहीं है कि उनके ऊपर बहुत सारे विषय लाद दिए गए हैं और परीक्षा की पद्धति यह है कि बर्ष के

अन्त में जाकर बच्चे रट रटाकर पास होते हैं ? मैं जानना चाहता हूँ कि क्या आप मासिक परीक्षाओं का ऐसा सिलसिला चालू करेंगे जिसमें बच्चे हर महीने में परीक्षा के दृष्टिकोण से ही पढ़ें और ध्यर्ष की बातों में न पड़ सकें ।

चौथी बात यह है कि बच्चों का करैक्टर बनाने, अर्थात् उनका चरित्र निर्माण करने के लिए क्या आप नैतिक शिक्षा को अनिवार्य करने का विचार रखते हैं ? यदि नहीं, तो क्यों ?

SHRI BEDABRATA BARUA (Kaliabor) : I want to know whether, in his answer to the original question, the hon. Minister conveys the impression that when unemployment is recognised, only research and study facilities alone have been on the anvil so far as the Education Ministry is concerned.

He should correct this impression. The Education Ministry cannot ignore the employment aspect. It should be examined whether the system of education itself has been completely disoriented so far as employment is concerned and whether a man, when he is educated, instead of getting a job, becomes less able to get a job.

It should also be examined whether the system of education, due to lack of certain aspects, is itself a causative factor to student unrest and whether the syllabi need some change at the lower and higher levels.

THE MINISTER OF EDUCATION AND YOUTH SERVICES (DR. V. K. R. V. RAO) : Sir, a number of questions have been raised. Shri Goyal and others have made a number of suggestions, all of which deserve and will receive attention and consideration. The causes of student unrest are so many that it is very difficult for any one department or party to cope with it. Even the educational system, let alone the minister or the department, by itself will find it very difficult to cope with this problem on its own. A large number of other parties are involved, to which attention was

[Dr. V. K. R. V. Rao]

drawn in the course of the debate on Mr. Madhu Limaye's Bill.

I am sorry Shri Jharkande Rai is not here. It is all very well to discuss ministers and politicians in a particular way, because everybody assumes that politicians can be described in a certain language. They know that it is no more than an affectionate way of rebuking the minister. Neither the minister nor the persons using such language are really perturbed by it. But when we talk of educationists, teachers, professors, etc., when he calls the Vice-Chancellor of Banaras University as a contemptible person, the effect of it is certainly not going to bring about a better student teacher relationship. I am not just now expressing any opinion on any issue in a substantive manner. But it is important for all of us to remember that when we discuss Vice-Chancellors, educationists, professors, etc., our language should be a little different than what we use when we talk about ministers, deputy ministers or party leaders.

Mr. CHAIRMAN : It will not find acceptance even among the politicians.

DR. V. K. R. V. RAO : Several questions relating to employment, moral education, common schools, nepotism in selection committees, etc., have been raised.

Certainly, I do not know how my hon. friend, Shri Barua, got the impression that I, as an Education Minister, am not concerned with the problem of unemployment. I am very much concerned with it; but I can do precious little about it, excepting in so far as education itself is an instrument for causing unemployment, excepting in so far as education itself reduces the employability of those who pass through the educational mill. In so far as that is concerned, we can talk of educational manpower planning. We can say that the number of students admitted to the different courses should not exceed the likely demand for those professions, as in the case of engineering education, where we succeeded for some time in manpower planning. Then recession and other things

came and we found that the supply exceeded demand and we were in difficulties.

But on the larger question of the unemployment problem of art graduates, matriculates and intermediates it become very difficult. How do we do manpower planning? It is extremely difficult to project the demand for matriculates; it is extremely difficult to assess or estimate the demand for intermediates or B. A. (Pass) or B. Sc. (Pass) graduates. Even if you project the demand, it becomes very difficult to restrict the supply to demand because, as Shri Madhu Limaye spoke in another connection a few minutes ago, we cannot restrict the admission; we are asked to give full facilities to anybody who wants to join the college. Therefore, manpower planning, unemployment etc. are not matters which can be solved by the educationists or by the Education Ministry. It forms parts of a larger problem which ultimately, I am afraid, will have to be determined in terms of economic development, social development and socio-economic changes. But let me not go into all those things. Let me come to the actual question that have been asked.

Shri Goyal referred to the need for fixing a teacher-taught relationship. Then he asked; should we not have more residential schools and should we not give better emoluments to the teachers so that we can attract the best people? I entirely agree with him. But the question is: where do we get the resources for paying these higher emoluments? The lowest percentage of the total plan outlay so far given to education is in the Fourth Plan and yet, though I have raised this question when I intervened on the discussion of the President's Address and even though there was an opportunity for my hon. friends to have drawn pointed attention of Government to the need for more expenditure on education, I have gone through the record of the budget discussion and I find that there has been very little attention paid to this subject. That is no good.

We cannot live in a disintegrated way. If we want better salaries for teachers, if we

want more residential schools and better equipments for college, to the extent this august House can influence government policy as a whole, it should make its voice felt. I do not know if Shri Goyal intervened in the budget debate or not. If he had not, he should have asked some of his party members to do so. Because, unless there is public opinion, it is difficult to get more allocation for education.

SHRI RANGA (Srikakulam): He should argue with his Cabinet colleagues for increased allotment.

DR. V. K. R. V. RAO : I am very sorry that he has misunderstood me. He should realise that a Cabinet member by himself cannot bring about miracles.

SHRI SHRI CHAND GOYAL : We will speak during the discussion on Demands for Grants.

DR. V. K. R. V. RAO : About moral education, I certainly agree with hon. Members who have spoken that character needs to be developed and moral education is necessary. But the moment we talk of moral education it becomes very difficult to give it concrete content. We cannot include it in religious education because under the Constitution we cannot teach any particular religion. At the same time, everybody is agreed that there should be inculcation of moral and spiritual values among the students. How it should be done is the question.

Recently we were thinking that the introduction of national social services, an alternative to NCC in the colleges, might help in this matter. I am hoping that at least in schools something should be done by way of inculcating moral and spiritual values. But I assure you that it is very difficult to do in the colleges because when you go and talk to the students, I am sure they will all get up and say : "teacher, first heal thyself before you try to heal us."

19 hrs.

I agree with the suggestion that there should be parent-teacher associations. I

think, the more parent-teacher associations there are and the more effectively they function, it will be helpful. As far as our Ministry is concerned, certainly the moral support is there; other kinds of support I do not promise. But I certainly do think that this is a good suggestion and we would be quite prepared to welcome it within our very limited resources.

Regarding constructive work, I have already mentioned the social service programmes. Also, there are voluntary organisations. I do not want to go into details because the hour is late. A number of very good things have been done in this country. I will give just one example. Baba Amte in the Chanda District of Maharashtra is doing the most marvellous work. He is running an institution for lepers and the lepers there have become self-reliant. Last year he organised a camp where he got students from two or three States together. Those students worked there for 10 or 15 days and they went back completely imbued with social values. This year he wants to organise another camp. He came and saw me and asked me to write to the Vice-Chancellors. Only yesterday, I have written to all the Vice-Chancellors requesting them to send three or four students from their universities to this camp. That is one way. We are prepared to help, stimulate and support voluntary organisations. Also, it will be of assistance in giving constructive outlet for the undoubted energies of students.

I will come to the question of the committee later. Shri Sreedharan said, "Abolish special schools" and asked, what will I do about capitation fees, nepotism and corruption. As far as the special schools are concerned, I am afraid, I cannot abolish them; they are doing good work. I know, children of rich people go there and all that, but they are good schools and I have too few good schools in the country and it is not possible for me to go round and abolish all the good schools that exist. What I am trying to do is to see that these schools make provision for the admission of people who are not in a position to pay the fees that these schools charge. My hon. friend will be glad to know that at a recent con-

[Dr. V. K. R. V. Rao]

ference that we had of Indian public schools, they have agreed to take up this suggestion and they are going to try and make provision for that. Of course, they will start in a modest kind of way. They are trying to make provision from their own resources of some proportion of free studentships and scholarships. May be, Government might help them in providing such free studentships and scholarships. What is the position in England? When I was a student, I think, 25 per cent or 30 per cent of the students were drawing scholarships; but today, I believe, 90 per cent of the students there are on scholarships and free studentships. Therefore what we should do is not to do away with good educational institutions because they are being used by rich people today but to try and make them institutions which will also be available in large and increasing measure to students whose parents do not have enough financial resources.

Regarding capitation fee in colleges, I am afraid—I speak subject to correction because I do not know about medical colleges—they really do not come within my purview but I have an impression that strong action has been taken both in engineering colleges and in medical colleges in regard to capitation requirements. In any case, I shall look into it and I shall tell the hon. Member what the position is.

MR. CHAIRMAN : They are under the control of provincial governments and I do not know whether the Central Government can take any action.

DR. V. K. R. V. RAO : I will find out. If we cannot take action, at least we can stimulate public opinion.

Then, Shri Sreedharan says that in selections by selection committees there is a lot of nepotism and corruption and so on. I shall not say that there is no nepotism or corruption in this country but I do say from my own experience and with a full sense of responsibility that out of 100 jobs filled on the basis of an examination may be, 10, 12, 8 or 5 jobs may not be filled on the right

lines—the vast majority of the jobs that are filled up in this country on the basis of examinations or other formal methods of recruitment are filled up on proper grounds. Unfortunately, the impression has now been created that without *sifarish* you cannot get anything. So many students come and request me, "Please give us a chit." I tell them, "Why do you want a chit? You have got a good degree." They say that without *sifarish* you cannot get anything. The creation of this mentality is one of the most important reasons for students' unrest, because once even the good students begin to believe that they will never be able to get a job unless they get *sifarish*, they are bound to go to them who can make *sifarish*—businessmen, politicians or somebody else. Certainly, to the extent there is corruption we will try to do our best to check it, but I think, we should not give wide public attention to it is a wrong way. I would beg of friends not to do that because anything that happens in our House goes to add to the theory that all selections, or the bulk of them, are based on nepotism and corruption. There is nepotism and corruption in this country but I am not prepared to admit that this country is full of nepotism or corruption. I am not prepared to admit that the vast bulk of things that are done in the country is based on nepotism and corruption. I think, it is high time that we started doing a little bit of lesser self-denigration and lesser self-flagellation and have a little more confidence in our selves because, if we do not do it, we are destroying the morale of the younger generation who take us literally. We may understand what we are saying. But they take us literally. Therefore, they are losing all sense of hope and getting frustrated. I do think it is necessary for us to be a little careful in these matters.

Regarding the suggestion of Mr. Tyagi, I have already dealt with the question of youth development and character. So far as residential schools are concerned, I have already said that it is a question of money. Then, Mr. Bedabrata Barua said that there are too many subjects and a heavy syllabus. All these things are being looked into. I am

not competent enough to pronounce an opinion as to whether there are too many subjects and a heavy syllabus. I have to go on the basis of expert advice. I have already said about the employment aspect also.

Now, the question was raised about the students, that they act as politicians and whether we should go into the antecedents of such student leaders and segregate them and so on. I do not like the idea of segregating anybody. I should like to tell the hon. Members that this problem can be solved. If you will pardon me of being a little autobiographical, when I was the Vice-Chancellor of Delhi University, the first thing I did was to get the students come to my house and we sat, 65 of us, for two days and we reorganised the entire constitution of Delhi University Union that, nobody can be an office-bearer who has put in more than a certain number of years after matriculation, that nobody can be the office-bearer for more than one occasion, etc., etc. It was all done entirely with the cooperation and free consent of the students and the members of the union. I do not think these are matters where we should think in police terms, laying down the law and so on. These are matters which have got to be done by taking students in confidence, talking to them and all that. I am sure they will agree, when we talk of segregation of professional politicians, that the students should be left to look after themselves. What we should try to do is to see that students' unions are so organised that they give opportunities for proper functioning of student talent and do not give opportunities for what my friend called professional politicians, stepping into their shoes.

Finally, regarding the suggestion that I should appoint a high-powered committee to go into problems of students unrest consisting of educationists, Members of Parliament and so on, I have a feeling that there have been so many committees. I have been just looking at my records. For the last 10 years, we have had committee after committee. Even now, some studies are going on. The Vice-Chancellors Conference the Education Commission, Dr. Tziguna Sen

Committee and a number of other committees have sat on it. I am not saying we know all the reasons for students unrest. For example, we do not quite know the reasons for specific students unrest in certain places. The studies are now being undertaken by the University Grants Commission. As the discussion has revealed, we are familiar with many of the problems of students unrest. What I want to do now is not to have more committees to look into this matter. But I want to have some action programme for this purpose. We have got a programme. We are going to have the Conference of Vice-Chancellors of Universities on the 21st and 22nd of this month. They will, of course, discuss some other things. But the problem I concretely want to put before them is the problem of what kind of a social service and other programmes we should have which will make some impact on the problem of students unrest.

Then, I also propose, in consultation with the University Grants Commission, to have a meeting of what I call the university students, of all the universities and of unions' representatives, who will be proposed to call a convention and discuss the problem.

Further, I also propose to have a meeting with youth organisations. I want to draw a distinction between the students and the youth—they may be in the university; they may not be in the university; they may have left the university—but they constitute a very important part of the younger people. We cannot leave them out. Therefore, I propose to have a meeting with leaders of different youth organisations in all these matters.

I must make it very clear that I am not going to function on a political basis; I am not going to function on a party basis. I am interested in seeing that the youth and the students of this country imbibe, what we all want the values of national integration, secularism, social awareness and so on and so forth.

I also propose to have a meeting with the Principals of Colleges because in many

[Dr. V. K. R. V. Roa]

parts colleges are much more than universities and which are affiliated to universities.

I am going to start a dialogue with my colleagues in Parliament. I am going to have a discussion with them. I have already drawn the list of names of persons with whom I can meet. I want to listen to people on the subject, not of the causes so much as to what they think are the practical solutions within the context and constraint of the resources.

Under the circumstances, I do not think it would be desirable for me to accept the

proposal that I should appoint another committee to go into all this.

I would like to tell the hon. Member that I am always at their disposal for discussion of the subject and any suggestion that they make will be received by me with the greatest respect and given the proper consideration. Thank you.

19.10. hrs.

The Lok Sabha then adjourned till Eleven of the Clock on Saturday, March 22, 1969/ Chaitra 1, 1891 (Saka)
